एक मंच की शुरुआत

विशेष संवाददाता

किसी भी चीज़ के बनने की प्रक्रिया बड़ी रोचक होती है। फिर बहुत सी औरतों का समूह बनने की प्रक्रिया तो ज़रूर अच्छी होगी। कैसे अलग-अलग वर्ग, पृष्ठभूमि से आने वाली औरतें साझे मुद्दों पर एक दूसरे के साथ जुड़ती हैं। कैसे अनदेखे प्यार के धागे सबको आपस में बांधते हैं। कैसे इंसान किसी भी ढांचे से बड़ा होता है। यह सब देखने को मिला दस और ग्यारह जनवरी को बड़ौदा में।

एक पुकार

बड़ौदा के 'ओलख' नामक महिला 'डौक्यूमेंटेशन' केंद्र ने सबको पुकारा था। आओ, मिल कर बैठें। आपस में सुख-दुख बांटें। साझे मुद्दों को पहचानें। एक समझ बने तो 'ओलख' से जुड़ें।

गुजरात के अलग-अलग भागों से औरतें आईं। कुछ महिला कार्यक्रमों से जुड़ी थीं। कुछ ग़रीब आदिवासियों के साथ काम कर रही थीं। कुछ पढ़ रही थीं या पढ़ा रही थीं। मतलब यह कि समाज के अलग-अलग क्षेत्रों की नुमाइंदा मौजूद थीं।

पैंतीस-चालीस औरतों के समूह में बहुत कम पहले से एक दूसरे को जानती थीं। हर कार्यशाला में जाकर मैं बार-बार ताज्जुब में डूब जाती हूं। अजनबी औरतें आपस में इतनी जल्दी कैसे खुल जाती हैं। ज़रा सी कोशिश से औरत-औरत के बीच इतने प्यार का रिश्ता कैसे बन जाता है। लेकिन खास बात यह कि उनकी व्यक्तिगत पहचान गुम नहीं होती। उनके विचार और विश्वास नहीं डगमगाते।

> **''समस्या चाहे निजी जीवन में हो या काम की जगह पर, हमें एक दूसरे की मदद का भरोसा हो। हम चाहे औरतों के साथ काम करती हों या बच्चों व पूरे परिवारों के साथ। जहां भी हमें लगे कि एकजुट आवाज उठानी चाहिए वहां एक साथ जुड़ें।''**

आपसी मिल-बांट

सभी ने मिल कर अपने तजुर्बे और विचार बांटे। औरतों के मुद्दों की परख की। अपने व्यक्तिगत जीवन के संघर्षों के बारे में बताया। पितृसत्तात्मक व्यवस्था को समझा। समाज द्वारा पैदा की गई लिंग असमानता पर चर्चा की। खूब हंसे, कुछ गाने गाए। कुछ आंसू बहाए। सबकी सहमति थी कि गुजरात में हमें एक समूह बनाने की ज़रूरत है जो साझे मुद्दों पर एक साथ जुड़ें।

समस्या चाहे निजी जीवन में हो या काम की जगह पर, हमें एक दूसरे की मदद का भरोसा हो। हम चाहे सिर्फ़ औरतों के साथ काम करती हों या बच्चों व पूरे परिवारों के साथ। जहां भी हमें लगे कि एकजुट आवाज़ उठानी चाहिए वहां एक साथ जुड़ें।

इस काम में अगर हमें अपनी-अपनी संस्थाओं, दफ्तरों का सहयोग मिलेगा तो बहुत अच्छा। वरना हमारी जवाबदारी अपनी होगी।

साझा फ़ैसला

इन सभी फ़ैसलों के साथ एक बड़ा अजूबा

फ़ैसला हुआ। किसी सहभागी ने यह बात नहीं उठाई। इस पर कोई बहस नहीं हुई। लेकिन सबने साझा फ़ैसला कर लिया कि यह हमारा अपना समूह होगा। इसे हम मंच कहेंगे। यह 'ओलख' की छाया तले नहीं जिएगा। 'ओलख' या किसी भी संस्था का सहयोग मंजूर है, लेकिन छतरी नहीं। ताकि इस मंच पर समानता रहे। कोई भी दबाव डालने की स्थिति में न हो। इसमें कोई ऊंचा-नीचा नहीं होगा।

है ना आश्चर्य की बात? उतनी ही महत्वपूर्ण बात यह थी कि 'ओलख' की टीम भी इस मंच की बराबर की सदस्य बन गई। वे इस कार्यशाला को बुलाने और चलाने वाली तो थी। लेकिन निर्णय लेने वाली नहीं।

इस बात से संतोष होता है कि हम सब समानता का अर्थ समझ रही हैं। समानता मांगना और समानता देना सीख रही हैं। किसी भी संगठन और आंदोलन की ईमानदारी की परीक्षा इसी से होती है कि जो कुछ हम कहते हैं, जिस पर विश्वास करते हैं उस पर अमल करते हैं या नहीं। □